International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(2): 151-153

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(2): 151-153
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 24-01-2021
Accepted: 19-02-2021

पूनम रानी
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ,
पंजाब, भारत

Corresponding Author:
पूनम रानी
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ,
पंजाब, भारत

भारतीय दर्शनों में बुद्धितत्व की अवधारणा

पूनम रानी

प्रस्तावना

अनेक विकल्पों में से किसी एक का निर्णय करने वाला तत्त्व ही बुद्धितत्व है। विषयों का ज्ञान कराने वाले तत्त्वों के रूप में बुद्धि को जाना जाता है। इन्द्रियों द्वारा देखे और सुने हुए और मन द्वारा ग्रहण किए हुए सम्पूर्ण विचारों में से एक विचार अथवा इस वस्तु के सम्यग् नाम एवं स्वरूप का ज्ञान कराने वाली बुद्धि ही है। किसी प्रकार के विषय को प्रकाश में लाने के साथ उसके ज्ञान का साधन भी बुद्धि ही बनती है। देकाते, स्पीनोजा, लाईबनीज आदि बुद्धिवादी दार्शनिकों ने तो बुद्धि को ही यथार्थ ज्ञान का साधन कहा है। इनके अनुसार बुद्धि ज्ञान उत्पन्न करने की शक्तियाँ जन्मजात हैं।

जिस प्रकार मकड़ी अपने अन्तर पदार्थ से जाल का निर्माण करती है, उसी प्रकार बुद्धि भी अपने जन्मजात प्रत्ययों से यथार्थ ज्ञान उत्पन्न करती है। भारतीय दर्शनों में बुद्धि को शरीर के भीतर रहने वाली इन्द्रिय कहा है। अर्थात् यह अन्तरिन्द्रिय है। बुद्धि के द्वारा बाहरी वस्तुओं का सीधे ग्रहण नहीं किया जाता अपितु ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से ग्रहण किया जाता है। इस कारण बुद्धि को अन्तःकरण भी कहा जाता है। वैसे तो अन्तःकरण एक है लेकिन व्यवहारिक दृष्टि से इसके चार भेद किये गए हैं– बुद्धि, मन, चित्त और अंहकार। इनमें से अन्तःकरण की निश्चयात्मक वृत्ति को बुद्धि कहा गया है।

सांख्य के अनुसार बुद्धि आकाशादि में रहने वाले सात्विक अंशों से उत्पन्न होने के कारण प्रकाशात्मक है। इन्होंने बुद्धि को निश्चय करने वाला तत्त्व कहा है।[1] जो सृष्टि प्रक्रिया में सर्वप्रथम उत्पन्न होता है।[2]

योगदर्शन वृद्धि के लिए चित्त शब्द का प्रयोग हुआ है। योगवाशिष्ट में चित्त को 'संवित' कहा है।[3] न्याय दर्शन में बुद्धि, ज्ञान एवं उपलब्धि का पर्याय कहा है।[4]

इन्होंने बुद्धि को प्रमेय कहा है।[5] जिसका अर्थ है जानने योग्य अर्थात् बुद्धि जानने योग्य पदार्थ है।

वैशेणिकदर्शन में विषयों को प्रकाश में लाने वाला तत्त्व अर्थात् विषयों का ज्ञान कराने वाला तत्त्व को बुद्धि कहा है।[6]

मीमांसादर्शन में बुद्धि को ज्ञान शब्द से अभिहित किया है। चोवना सूत्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए बुद्धि को ज्ञान की प्रत्यक्षता से उत्पन्न कहा है।[7]

वेदान्त दर्शन में बुद्धि को चक्षु आदि इन्द्रियों के समान जीवात्मा का करण कहा है।[8] बौद्ध (विज्ञान) को ही एकमात्र सत्य माना है। सम्पूर्ण पदार्थो को बुद्धि रूप माना है।[9]

भारतीय दर्शनों में बुद्धि के लिए मति, व्याति, प्रज्ञा, चित्त, मन, ज्ञान, विज्ञान, धी, उपलब्धि विद्यायुक्ति आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है।

जैनदर्शन में बुद्धि को ज्ञान की संज्ञा दी है, जिसे आत्मा का मौलिक गुण कहा है। जैन दर्शन में व्यवहार नय की दृष्टि से ज्ञान (बुद्धि) और आत्मा में भेद माना गया है, और निश्चय की दृष्टि से बुद्धि और आत्मा में भेद माना गया है और निश्चय की दृष्टि से बुद्धि और आत्मा में किसी भी प्रकार का भेद नहीं है। इन्होंने बुद्धि को आत्मा का गुण कहे हुए कहा है कि वह किसी भी समय अपने गुणी द्रव्य से अलग नहीं हो सकता। अतः ज्ञान (बुद्धि) को आत्मा से भिन्न नहीं कहा जा सकता। अतः जैनों ने कही पर बुद्धि (ज्ञान) को आत्मा से भिन्न कहा है और कहीं पर ज्ञान (बुद्धि) को आत्मा कहा है।[10]

बुद्धि की उत्पति– साख्यं आचार्यो ने बुद्धि की उत्पत्ति मूल प्रकृति से कही है।[11] उपनिषदों में बुद्धि (मन) की उत्पत्ति ब्रह्म से बताई गई है।[12] पातंजल योगदर्शन में बुद्धि (चित्त) का स्थान सुषुम्णा नाड़ी के पास कहा है।[13] आधुनिक काल के मनोवैज्ञानिकों ने भी मस्तिष्क के तने और सुषुम्णा को समस्त स्नायु संस्थान की धुरी कहा है।[14]

अन्तःकरणों में बुद्धि का स्थान– अन्तःकरण दो शब्दों से मिल कर बना है। अन्तः+करण। अन्तः का अर्थ है कि अन्दर और करण का अर्थ है साधन। करण शब्द के दो अर्थ है– अन्तःकरण और बाह्य करण। करण शब्द के दो अर्थ हैं अन्तःकरण और बाह्य करण।

करणों की संख्या के विषय में दर्शनाचार्यो में भेद दिखाई देता है। सांख्याचार्यो ने करणों की संख्या तेरह कही है।[15] पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कमेन्द्रियाँ, बुद्वि, मन एवं अंहकार जिनमें पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कमेन्द्रियों को बाह्यकरण के रूप में जाना जाता है, और बुद्धि, मन और अंहकार को अन्तःकरण के रूप में जाना गया है। सांख्यचार्यो के अनुसार तेरह करणों से उत्पन्न होने वाली क्रियाओं का हेतु मूल प्रकृति है। उत्पन्न होने वाले तत्त्व कार्य कहलाता है और कार्य की सिद्धि करने वाला करण कहलाता है। तेरह करणों में पाँच कमेन्द्रियों को स्थूल करण हैं, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ सूक्ष्म करण हैं और मन, बुद्धि और अंहकार अत्यन्त सूक्ष्म करण है। अतः कमेन्द्रियों पर ज्ञानेन्द्रियों का शासन है, ज्ञानेन्द्रियों पर मन, बुद्धि एवं अंहकार अथवा अन्तःकरण का शासन है। मन का कार्य संकल्प करना अंहकार का अभिमान और बुद्धि का कार्य अध्यवसाय करना है।

इस प्रकार कमेन्द्रियाँ बाहर के विषयों का ग्रहसण करती हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ उन विषयों को धारण करती हैं और बुद्धि आदि अन्तःकरण उस विषय को प्रकाश में लाता है।[16] सर्वप्रथम हमें किसी विषय का भान कमेन्द्रियों या ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होता है। तदनन्तर उस विषय पर 'मन' संकल्प–विकल्पात्मक विचार करता है। मन उस विषय को अंहकार को सौंपता है और अन्त में अंहकार उस कार्य को बुद्धि को सौंपता है। बुद्धि उस विषय पर निश्चयात्मक निर्णय करके उस विषय का निश्चयात्मक ज्ञान करा देती है। इस प्रकार सभी बाह्य करण साधन मात्र हैं। मन एवं अंहकार भी बुद्धि की अपेक्षा गौण हैं। गुणों के सन्निवेश रूप, अंहकार ओर मन और बाहरी करण प्रदीप के समान मिलकर कार्य करने में असमर्थ हैं ये अपने पुरुषार्थ को पूर्णरू‍प से प्रकाशित करके उसे बुद्धि को समर्पित कर देते हैं। इस कारण सभी अन्तःकरणों में 'बुद्धि' को ही प्रधान अन्तःकरण के रूप में जाना गया है।

बुद्धि की सृष्टि– दर्शनाचार्यो ने बुद्धि की सृष्टि को 'प्रत्ययसर्ग' के नाम से अभिहित किया है। जिसके कद्वारा ज्ञान ताहे अथवा वह 'प्रत्यय' अथवा 'बुद्धि' है। धर्म, अधर्म आदि बुद्धि के आठ भावों का विपर्यय अशक्ति, तृष्टि और सिद्धि इन चार वर्गो में विभाजन किया गया है। और विपर्यय, अशक्ति, तृष्टि और सिद्धि इन वर्गो वाले बौद्धिक सर्ग के गुणों की विषमता या न्यूनाधिक होने के कारण अथवा एक–दूसरे के दब जाने के कारण 'प्रत्यय' अथवा 'बुद्धि' के प्रयास भेद कहे गए हैं।'[18]

बुद्धि के धर्मो का दूसरे प्रकार से विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि, सिद्धि आदि इन चार वर्गो में विभाजन किया गया है। विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि और सिद्धि में इन आठ धर्मो का अन्तर्भाव हो जाता है। यथा ज्ञान का अन्तर्भाव सिद्धि में, अज्ञान का विपर्यय में, धर्म, वैराग्य, अनैश्वर्य का 'तुष्टि' में और अधर्म, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य का 'अशक्ति' में अन्तर्भाव हो जाता है। विपर्यया चार भेदों के गुणों के न्यून–अधिक होने के कारण ही बुद्धि के प्रचार रूप कहे हैं। जैसे विपर्यय के पाँच भेद, अशक्ति के अठाईस, तुष्टि के नौ और सिद्धि के आठ भेद हैं।

विपर्यया का अर्थ है उल्टा ज्ञान। इसमें बुद्धि को अवस्तु में वस्तु का ज्ञान होात है। इसके पाँच भेद हैं– (1) तम, (2) मोह, (3) महामोह, (4) तामिस्र (5) अन्धतामिश्र। इनमें भी तम के आठ, मोह के आठ महामोह के दश, तामिश्र के अठारह और अन्धतामिश्र के भी अठारह भेद हैं।[19]

मन, बुद्धि, अंहकार तथा तन्मात्ताएँ जो आत्मा नहीं हैं, उन्हें आत्मा ामानना 'तम' है। इन आठों के आठ विषय होने से तम के आठ रूप है। अणिमा, महीमा, गरिमा, लाधिमा, प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व, विशित्व इन आठ प्रकारक ी सिद्धियों में लग जाना ''मोह'' है।

आठ सिद्धियों और दश इन्द्रियों के दस विषयों और उनके विषयों के भोग की इच्छा करना 'महामोह' है।

आठ सिद्धियों और दश इन्द्रियों के विषयों के भोग प्राप्त न होने पर उनके लिए क्रोध उत्पन्न होना 'तामिस्र' है।

आठ सिद्धियों और दश इन्द्रियों के विषयों के भोग की अधूरी प्राप्ति 'उत्धतामिस्र' है।

इन्द्रिय वर्धो के कारण बुद्धि का अपने कार्य में विफल होना 'अशक्ति' है।

किसी वस्तु की प्राप्ति होने पर भी संतोष रहना और प्राप्त न होने पर भी संतोष होना 'तुष्टि' है।[20]

बुद्धि के धर्म, अधर्म आदि भाव या परिणामें के आधार पर ही शब्द–स्पर्श आदि तन्मात्राएँ और सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर के रूप में भोगायतन होते हैं।

योगदर्शन में इन तमस्, मोह, महामोह, तिमिस्र और अन्धतामिस्र को क्रमशः अविद्या, आसमिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश कहा गया है।[21]

बुद्धि का आत्मा (पुरूष) के साथ सम्बन्ध– बुद्धि प्रकृति का परिणाम होने के कारण अचेतन तत्त्व है और पुरुष जिसे सांख्य में पुरुष तत्व और अन्य दर्शनों में आत्मा कहा गया है, वह चेतन तत्त्व है। बुद्धि का आत्मा के साथ अत्यन्त निकटतम सम्बन्ध है। क्योंकि प्रकृति के कार्यो में सबसे सूक्ष्मतम रूप बुद्धि का है। जिसे सांख्याचार्यो ने बुद्ध महत्त कहा है, योगाचार्यो ने 'चित्त' नैयायिकों ने बुद्धि, कहा है। आत्मा का बुद्धि के साथ निकटतम संबंध होने के कारण ही आत्मा बुद्धि के सभी सुख–ुदःख, ज्ञान–अज्ञान आदि को अपना धर्म मान लेता है। चेतन पुरुष (आत्मा) बुद्धि के द्वारा अन्नुहीत होता है, और पुरुष के साथ अभेद को प्राप्त होने के कारण बुद्धि द्वारा उत्पन्न ज्ञान भी चेतन के समान प्रतीत होने लगता है।[22]

बुद्वि के योग से ही आत्मा द्रष्टा बनता है। सूक्ष्म शरीर का सबसे प्रमुख तत्व महत्त अथवा बुद्वि तत्व है और बुद्धि से ही आत्मा का अव्यवहित रूप से संयोग होता है तथा बुद्धि के माध्यम से ही आत्मा का अन्य तत्त्वों का अन्य तत्त्वों के साथ सम्पर्क होता है।

वैशेषिक दर्शन में कहा गया है कि– ''बुद्धावारोपित चैतन्यस्य विषयेण सम्बन्धों ज्ञानम् ज्ञानेन सम्बन्ध चेतनोऽहें करोत्युपलब्धिः अर्थात् पुरुष स्भाव से ही आसंग तथा निगुर्णातीत है, परन्तु बुद्धि प्रतिबिम्ब होने पर ही उसे भोक्ता तथा ज्ञाता कहा गया है।[23]

उपनिषदों में भी कहा गया है कि सुषुप्ति5काल में यह आत्मा चैतन्यगुण रूप विज्ञान द्वारा इन्द्रियों के विज्ञान शक्ति को ग्रहण करके सोता है।[24] यहाँ विज्ञान शब्द से तात्पर्य बुद्धि से है।

बुद्धि के द्वारा ही आत्मा ज्ञानेन्द्रियों की ज्ञानशक्ति का ग्रहण करता है। यह आत्मा बुद्धि सहित स्वप्न होकर इस लोक का अतिक्रमण करता है।[25] अतः बुद्धि का आत्मा के साथ सम्बन्ध स्वप्न में भी रहता है।

बुद्धि के द्वारा पुरूष की मुक्ति– बुद्धि, मन, अंहकार, पंचतन्मात्र और पाँच महाभूतों से सूक्ष्म शरीर की रचना मानी गई है और बुद्धि सहित इसी सूक्ष्म शरीर का ही पुनर्जन्म होता है। इसी के साथ ही आत्मा का वर्चस्व हैं। पुरूष इस बुद्धि सहित सूक्ष्म शरीर के माध्यम से ही विवेक ख्याति प्राप्त करता है।[26] सूक्ष्म शरीर से ही स्थूल शरीर का निर्माण होने पर ही शरीर में आत्मा का प्रवेश होता है। जब तक सूक्ष्म शरीर विद्यमान है तब तक बुद्धि के साथ अपने को सुखी, दुःखी, भूखा–प्यास समझता है, जैसे पानी से भरे हुए कई घड़ों में सूर्य का प्रतिबिम्ब अलग–अलग दिखाई देता है। जब वे घड़े नष्ट हो जाता हैं, तो उसके साथ–साथ वे प्रतिबिम्ब भी नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार जब तक बुद्धि आदि अन्तःकरण सूक्ष्म शरीर की उपस्थित है, तब तक पुरुष की विद्यमानता है और जब बुद्धि आदि अन्तःकरण समाप्त हो जाता है तो पुरुष भी अकेला रह जाता हैं अतः मनुष्य शरीर में आत्मा का अस्तित्व केवल बुद्धि आदि से युक्त सूक्ष्म शरीर के विद्यमान रहने तक ही होता है। बुद्धि युक्त सूक्ष्म शरीर के न रहने पर आत्मा (पुरुष) भी स्थूल शरीर को छोड़ देता है।

योग दर्शन के अनुसार पुरुष की बुद्धि संसार में वासनावश देह और इन्द्रिय के द्वारा भोगने योग्य अयोग्य वस्तु विषय भोग में आसक्त होती है तथा जिसके मन में कभी मोक्ष की इच्छा जाग्रत नहीं होती, वह मनुष्य कीड़े के समान है। बुद्धि अथवा चित्त के सर्वथा शान्त होने जाने पर ही मोक्ष होता है।[27]

बुद्धि की शुद्धि हो जाने पर पुरुष वासना शून्य भाव वाला हो जाता है। बुद्धि एकमात्र निवर्साणरूप परब्रह्म में ही स्थिर हो जाती है। जिससे मोक्ष नामक अनन्त शक्ति का उदय होता है। जब मानव बुद्धि आसक्ति रहित हो जाती है तो तभी शुभ कर्मो का अनुष्ठान होता है और अशुभ कर्मो का त्याग होता है। जब तक मानव बुद्धि की विषयों में आसक्ति होती है, तब तकि यह बुद्धि दुःख देने वाली है, जैसे शहद के घड़े में घुसी हुई मक्खी से न तो वहाँ से उड़ा जाता और न ही मरा ही जाता। उसी प्रकार मानव बुद्धि भी विषय–वासनाओं में फंसकर न तो उन वासनाओं का त्याग कर सकती और न ही विवेकयुक्त हो सकती है। जब यह बुद्धि अन्तद्रष्टि स्वरूप होकर विवेक युक्त होती है, तभी पुरुष का मोक्ष होता है[28]

जीव की तीन प्रकार की अवस्थाएँ कही गई हैं– जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्त अवस्था। जाग्रत अवस्था में जीव बुद्धि के साहचर्य से हृदय में रहता है तथा बुद्धि और इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष और कर्म करता हुआ शरीर पर शासन करता हैं अतः जब जीव की जाग्रत अवस्था में शरीर इन्द्रियाँ और बुद्धि सक्रिय रहती है। अन्य इन्द्रियाँ विरत हो जतीी हैं। इन्द्रियों के विलीन हो जाने पर बुद्वि से घिरा हुआ जीव शरीर की नाड़ियों में व्याप्त होकर जाग्रत वासनाओं से रचित स्वप्न देखता है। जीव की स्वप्नावस्था में बुद्धि ही क्रियाशील रहती है। वटबीज में वटवृक्ष छुपा रहता है, इसी प्रकार बुद्धि भी स्वप्नावस्था में अविद्या में अवस्थित रहती है।[29]

जीव की सुषुप्ति अवस्था में बुद्धि से सम्बन्ध छूट जाता है अर्थात् जीव की सुषुप्ति अवस्था में बुद्धि एवं अन्य इन्द्रियाँ कार्य नहीं करती।

बुद्धि के गुणों के अनुसार जीव की अवस्था– बुद्धि में भी सत्वगुण के साथ–साथ रजस और तमस गुणों की भी विद्यमानता रहती है। जब जीव की बुद्धि सत्त्व गुण वाली होती है तो मनुष्य शान्त अवस्था को प्राप्त होता है और महान सुख की प्राप्ति होती है। जब वृद्धि में रजोगणु वाली होती है तो जीव में अनेक प्रकार के भाव उठते हैं और जीव क्षुब्ध और दुःखी रहता है। जब बुद्धि में तमोगुण की अधिकता होती है, तब जीव, काम, क्रोध, लोभ तथा मोह आदि भावों से युक्त होता है।[30]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय दर्शनों में बुद्धि तत्व को समस्त इन्द्रियों में अत्यन्त सूक्ष्म तत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया है। बुद्धि में पदार्थो (विषयों) को जानेन, उनमें भेद करने एवं उनका निर्णय करने की क्षमता है। मनुष्य जीवन के महान उद्देश्य 'मोक्ष' की प्राप्ति कराने में भी बुद्धि की अहम् भूमिका है क्योंकि किसी ज्ञान की प्राप्ति केवल शुद्ध बुद्धि ही कर सकती है। जब अन्तर में ज्ञान–प्राप्ति द्वारा मानव विवेक युक्त हो जाता है तो उसे नित्य–अनित्य का बोध होता है जिसके फलस्वरूप वह 'मोक्ष' की प्राप्ति के लिए अग्रसर होता है। क्योंकि सभी इन्द्रियाँ बुद्धि के साहसर्ता से ही कार्य करती है जो पुरुष के लिए है। इस कारण ही पुरुष समस्त जीवन का अनुभव करने योग्य होता है तथा अपने और प्रकृति के बीच भेद का ज्ञान करता है।

सन्दर्भ :–

1. अध्यवसायो बुद्धिः
2. मूलप्रकृतिर विकृतमर्हदाघाः। सांख्य कारिका–3
3. बुधा संविच्चिदित्युक्ता सर्वगा सर्वरूपिणी। सर्वत्र स्वमहिम्नैषा सर्वेणैवडनुभूयते।। योग वाशिष्ठ10/21 पृ॰ 475
4. बुद्धिरूपलब्धिर्ज्ञानमित्यनर्थान्तरम्। न्याायसूत्र 1.1.5
5. आत्माशरीरेन्द्रियार्थबुझिमनः प्रवत्तिदोषप्रत्यभावफलदुखापवर्गास्तु प्रेममय।।
6. अर्थप्रकाशको बुद्धिः। लक्षणावली पृ॰ 22
7. मीमांसा दर्शन (भा॰द॰ बलदेव उपाध्याय) पृ॰ 385
8. चक्षुरादिवत्तु तत्सहशिष्टायदिभयः। वेदान्त दर्शन अ.2, पाद 4 स॰ 10
9. भारतीय दर्शन (बलदेव उपाध्याय, बौद्ध दर्शन), पृ॰ 229
10. सांख्यकारिका
11. (1) एतस्माज्जायते प्राणों मनः सर्वेन्द्रियाणि च। मुण्डकोपनिषद् 2.1.3
    (2) ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य अ॰ 2, पाद 3 पृ॰ 562, पं. 12
12. पातंजल योगदर्शन (योगभषनिवृत्ति) समाधि पाद, पृ॰ 121
13. जी न्यूज, 26 जनवरी 2018
14. अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा बाहयं त्रयस्य विषयाख्यम्। सां. का. 33
15. करणं त्रयोदशविधं तदाहरणधारणप्रकाशकरम्।
16. कार्य च तस्य दश्धाडडहार्य धार्यं प्रकाश्चयं च।। सां. का. 32
17. एतेप्रदीपकल्पाः परस्परविलक्षणा गुणविशेषाः।
    कृत्सनं पुरुषार्थ प्रकाश्य बुद्धौ प्रयच्छति।। सां. कां. 36
18. एष प्रत्ययसर्गो विपर्ययाशक्ति तुष्टिसिद्धयाख्यः।
    गुणवैषम्यविमर्दात् तस्य च भेदास्तु पंचाशत्।। सां॰धा॰ 46
19. सांख्य कारिका 48 (तामिस्रोडष्टादशधा, भेदस्तमसोडष्टविधो मोहस्य च, दशविधो महामोतः
20. सांख्य काव्य कौ मुदीसहित। (सांख्यकारिका) रामकृष्ण आचार्य, पृ॰ 171, 172सा॰ का॰ 48 की व्याख्या।
21. अविद्यास्मितारागद्वैषाभिनिवेशाः कलेशाः। योग सूत्र 2/3.1
22. तस्मात्तत्संयोगादचेतनं चेतनावदिव लिड्गम्।
23. सांख्य तत्त्वकौमुदी में सा॰का॰20 की व्याख्या, पृ॰ 115
24. वैशेषिक दर्शन (बलदेव उपाध्याय के भारतीय दर्शन में), पृ॰ 333
25. तदेषां प्राणानां विज्ञानेन विज्ञानमादाय''। बृहदारण्यकोपनिषद्, 2. 1.17
26. सधीः स्वप्नो भूत्वेमं लोकमतिक्रामति। ब्रह्मसूत्रशांकरभाष्य, 4.3.7
27. भारतीय दर्शन (आचार्य बलदेव उपाध्याय), पृ॰ 616
28. योगवाशिष्ठ, पृ॰ 14
29. एवं तत्त्वाभ्यासान्नास्मि न मे नाहमित्यपरिश्ज्ञेषम्।
    अविपर्यपाद् विशुद्धं केवलमुत्यघ्ते ज्ञानम्।। सा॰का॰ 46
30. ज्ञानेनोपसंहारो बुद्धेः कारणतास्थितिः।
    वटबीजे वटस्यैव सुषुप्तिरमिधीयते।। भारतीय दर्शन, सुखपांच, जी श्री वास्तव (योगदर्शन) पृ.437
31. सांख्य तत्त्वकौमुदी, प्र॰ 212